International Journal of Education and Science Research Review
Volume-11, Issue-5 Sep-oct-2024 E-ISSN 2348-6457
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal) P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Impact Factor - 7.02 Email- editor@ijesrr.org

महिला लेखको के उपन्यासों में मानवीय संवेदना का एक अध्ययन

बीधाराम, अस्सिटेंण्ट प्रोफेसर (हिन्दी) विद्या संबल योजना,

राजकीय महाविद्यालय उच्चैन, भरतपुर।

सारांश: साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, बल्कि मनुष्य की संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का वो माध्यम है जो मनुष्य को एक नयी दिशा की ओर ले जाने के लिए प्रेरित करता है। कहा जा सकता है कि साहित्य मानवीय संवेदनाओं को उकेरने का एक सशक्त माध्यम है। यह समाज का ऐसा दर्पण है जो भूत, वर्तमान और भविष्य को समेटे हुए आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणाप्रद तो है ही पर पथ प्रदर्शक भी हैं। समाज के उभरते और बदलते परिदृश्य में महिलाओं की संवेदना को साहित्य में बखूबी देखा जा सकता है. समकालीन साहित्य वास्तव में आम आदमी के जीवन का साहित्य है। यह इतिहास की बड़ी घटनाओं और क्रान्तियों व राजनीतिक परिणामों पर आधारित नहीं है। बल्कि यह आम आदमी की पीड़ाओं, व्यथाओं, विडम्बनाओं और संवेदनाओं को केन्द्र में रखकर सृजित होता है। समसामयिक साहित्य और उसकी संवेदनाएं पहले की अपेक्षा अधिक लोकतांत्रिक हैं, जो विविधताओं से पूर्ण हैं। किन्तु वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक तथा वैश्वीकरण के खतरों से उतना सावधान नहीं है, जितना होनी चाहिए। तथा इसे अपनी शक्ति और सामर्थ्य को बढ़ाते रहना चाहिए। आज का भारतीय और हिन्दी का समकालीन साहित्य विश्व की अन्य भाषाओं में लिखे जाने वाले समकालीन साहित्य से कहीं अधिक समर्थ है, क्योंकि वह लोकजीवन को संस्पर्श करता हुआ लिखा जा रहा है। इस लोक जीवन में लोकतंत्र ही नहीं बल्कि पूरा संसार प्रतिबिम्बित हो रहा है।

मुख्य शब्द, स्त्रियों, संवेदनाओं, आधुनिक विचारक, वैश्वीकरण आदि।

प्रस्तावना: हमारा विश्व और हमारा समाज तीव्रगति से बदल रहा है, जिसे समीक्षक जेट स्पीड परिवर्तन भी कहते हैं. आज के क्षण में दूसरे क्षण को देखें तो परिवर्तन दिखाई देगा। बाजारवाद और वैश्वीकरण, जीवन मूल्यों का निर्णायक होता जा रहा है जिसमें भारतीय समकालीन मूल्यों की खोज कठिन दिखाई देती है। विमर्श और स्त्री विमर्श के साहित्य से संबंधित अनेक संस्थाएं देश में सक्रिय हैं, किन्तु इनके भीतर पनपती राजनीति आपसी द्वेष, फैशन परस्ती, मीडिया में छवि बनाने की होड़, सरकारी–गैर सरकारी अनुदान प्राप्त करने के लिए अपनाए गए हथकंडे और जिन दलितों और स्त्रियों के बीच में ये कार्य करती है और जिनके हित के लिए कार्य करती है। उन्हें अपने स्वार्थ के लिए औजार की तरह इस्तेमाल करती हैं। यह कटु सच्चाइयां हैं, जिनके विरोध में कुछ करने के पहले उन चुनौतियों को स्वीकार करना पड़ेगा जिनकी जिन्दगियों में लिपटा स्त्री विमर्श सामने आता है। स्त्री विमर्श या विचार करते हुए स्त्री विमर्श शब्द की संक्षिप्त व्याख्या आजकल स्त्री विमर्श (वुमेन डिस्कोर्स) के पर्याय के रूप में लिया जाता है। डिस्कोर्स शब्द का अर्थ है, अभिव्यक्ति, बोलना या अपनी बात को दूसरे तक संप्रेषित करना। जीवन जीने का एक सार्थक तरीका पुरुष के सत्तात्मक समाज में स्त्री गूंगी थी। उसने साहित्य के माध्यम से बोलना सीखा और अपनी भाषा को गढ़ा और पुरुष की भाषा से मुठभेड़ किया स्त्री विमर्श दैहिक शोषण के विरुद्ध अभियान या आन्दोलन है किन्तु दैहिक

शोषण से भी भयानक मानसिक शोषण है।[1] दमन शोषण के असंख्य भावों से छलनी स्त्री के तन – मन और मस्तिष्क का लेखन ही स्त्री विमर्श है ऐसा प्रसिद्ध हिन्दी लेखिका चित्रा मुदगल का विचार है। जो संगत होते हुए भी संशोधन की आवश्यकता रखते हैं। वास्तव में स्त्री विमर्श की आवश्यकता इसलिए महसूस हो रही है कि स्त्री सामाजिक दुर्व्यवस्था के बीच में अग्निज्वाला की तरह दहक रही है। स्त्री के इस बदलाव में समाज के प्रति नकारात्मक सोच भी सम्मिलित है क्योंकि सामाजिक व्यवस्था की इस पूरी बनावट में स्त्री पूरी तरह संलिप्त है। उससे पूरी तरह निकलना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। अगर आज की स्त्री लेखिकाएं यह मानकर चलती हैं कि वे इस व्यवस्था को एक झटके से बदल देंगी तो पूरी सामाजिक बनावट भी विरूपित होगी इसलिए लेखिकाओं के मध्य में चिंतन किया जाना चाहिए, उनकी सोच नकारात्मक है या सकारात्मक है। असल में चाहे मातृ सत्तात्मक समाज में हो चाहे पुरुष सतात्मक समाज में आखिर स्त्री यानी औरत को एक समाज में रहकर एक अदद उसे चाहने वाला पुरुष चाहिए और उसकी इज्जत करने वाला, कम से कम एक अदद बच्चा भी समाज में रहकर पारिवारिक व्यवस्था में स्त्री के लिए अजीब सी त्रासदी है कि यदि वह पूरा अधिकार लेती है तो रिश्ता टूटता है और रिश्ता रखती है तो अधिकार छूट जाता है। स्त्री विमर्श के समर्थकों को इस प्राणतत्व को समझना चाहिए निश्चय ही नारी के हृदय का यह सूत्र हाथ लगने पर ही समाज में रहकर स्त्रीत्व के विमर्श को सार्थक किया जा सकता है। अनेक शोध पुस्तकों में स्त्री अपने परिवेश का वर्णन तो करती दिख रही है लेकिन देह के आकर्षण में आत्ममुग्ध नायिकाओं की तरह नहीं है। कई–कई जगह उनका आत्मबल प्रकट होता है। इससे आगे प्रभा खेतान की लिखी उपन्यास में स्त्री स्वयं में नारी मुक्ति और स्त्री विमर्श की कामना से छटपटाती पुस्तक है। इस विषय को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तथा आधुनिक विचारकों के माध्यम से लेखिका ने खूब मथा और झिंझोड़ा हैं। नारी संवेदना और नारी आंदोलन में संघर्षरत रहने की मानसिकता का चित्रण भी कहा है। वास्तव में यह पुस्तक स्त्री विमर्श के प्रतीक चित्र के रूप में है। आशा रानी वोहरा द्वारा लिखित यह पुस्तक स्त्री विमर्श की चिन्ता को नारी आंदोलन के रूप में अच्छा खासा चित्रण करती दिख रहीं हैं।[2] इस पुस्तक से यह स्पष्ट है कि हमनें ऐसा स्वार्थ और अर्थ केन्द्रित नारी समाज बना लिया है, जो संवेदना शून्य होता जा रहा हैं।

प्रभा खेतान के स्त्री चिंतन में स्त्री के अधिकारों को लेकर एक विवेकशील चिन्तन दिखाई देता है। स्त्री विमर्श पर लिखी गयी आधुनिक पुस्तकों में से अत्यंत ही महत्वपूर्ण पुस्तक नासिरा शर्मा की लिखी हुयी 'औरत के लिए औरत' पुस्तक में उनके सम्यक लेखन की धुरी पर सामान्य स्त्री बैठी है, और औरत पर लिखे गए स्त्री विमर्श की महत्वपूर्ण धुरी के रूप में विराजमान है। स्त्री विमर्श के नाम पर वैचारिक छीना–छीनी के इस माहौल के विपरीत नासिरा शर्मा ने औरत के सम्मुख प्रस्तुत संघर्षों, विडम्बनाओं और दुविधाओं का चित्रण किया है। व्यापक अध्ययन भ्रमण और सम्पर्क में लेखिका की टिप्पणियों और विश्लेषण को अधिक विशिष्ट बना दिया है। नासिरा की पुस्तक के अतिरिक्त मनीषा की पुस्तक 'हम सभ्य औरतें' भी न्याय के आत्मबल और वंचित की पक्षधरता के आत्मविश्वास के चलते ऐसा दस्तावेज तैयार करती है जो पात्रों को झकझोर देता है। इनके अतिरिक्त उषा महाजन की बाधाओं के बावजूद नई औरत तथा क्षमा शर्मा की पुस्तक स्त्रीत्ववादी विमर्श–समाज और साहित्य और कुमुद शर्मा की स्त्री घोष पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। इनसे यह तो प्रगट हो जाता है कि पुरुष वर्चस्व वाले समाज में स्त्री की समकालीन दशा

और दिशा क्या है। नारी संवेदना की गति क्या है। इसका आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक पक्ष क्या है। स्त्री विमर्श और नारी संवेदना को केन्द्र में रखकर कुछ चर्चित उपन्यास भी लेखिकाओं द्वारा लिखे गये हैं। जिसमें से सोना चौधरी का उपन्यास 'पायदान' एवं चर्चित लेखिका लवलीन का उपन्यास 'स्वप्न ही रास्ता' है। रजनी गुप्त का उपन्यास 'कहीं कुछ और है' एवं जयंती का उपन्यास 'आसपास से गुजरते हुए' लेखिकाओं का प्रशंसनीय प्रयास है। लेखक निलय उपाध्याय का 'अभियान' उपन्यास व कमल का 'आखर चौरासी' उपन्यास भी उल्लेखनीय है।[3] नारी संवेदना को केन्द्र में रखकर दलित स्त्री विमर्श पर चिंतन करने पर सबसे पहले फ्रांसीसी विद्वान मिशेल फूको का स्मरण हो आता है। जिन्होंने विमर्श का अर्थ शक्ति किया है। यह शक्ति ही दलितों का कारक है. सबसे पहले उन्होंने ही दलित विमर्श को जाति और स्त्री से जोड़ा, जब तक जाति का ताना बाना (नेटवर्क) नहीं टूटेगा, तब तक दलित चाहे जाति के आधार पर हो और चाहे सेक्स के आधार पर कोई सुधार नहीं हो सकता। इस पर गहराई से चिंतन होना चाहिए कि दलित जाति के साहित्य में भी मानवता मानी जाएं, या लेखन या सृजन के आधार पर माना जाये। डॉ. रामविलास शर्मा ने इस बात का विरोध किया है कि दलित जाति के आधार पर माने जायेंगे या साहित्य के आधार पर, भारत में दलित आन्दोलन की चेतना के आधार स्तम्भ डॉ. अम्बेडकर ने स्पष्ट किया है कि जब तक जाति प्रथा इस देश से नहीं जायेगी, दलित बनते रहेंगे, प्रताड़ित और पीड़ित होते रहेंगे। उन्हीं के प्रेरक उद्‌बोधन के आधार पर दलित विमर्श का साहित्य लिखा गया है। भारत में सूरजपाल चौहान, श्यौराज सिंह, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन संस्थान के तुलसीराम, प्रसिद्ध कवयित्री अनामिका जी तथा प्राध्यापक कृष्णदत्त पालीवाल, दलित स्त्री विमर्श के चिंतकों में माने जाते हैं। राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक स्तर पर रचे गये दलित स्त्री विमर्श के साहित्य को हाशिये पर पड़ा हुआ साहित्य नहीं माना जायेगा। श्यौराज सिंह ने स्पष्ट किया है, कि भारत के दलितों में साहित्य और लेखन की वजह से पहले से अधिक जागरुकता आ गई है। अब दलित स्त्री मजबूती के साथ सामने वाले से मुकाबला कर सकती है। यद्यपि बहुत से लोग टिप्पणी करते हैं कि दलितों ने ही जातिवाद को फैला दिया, पिछड़ी जातियां आगे आयी हैं। और संगठित होकर जातिवाद के नये रूप को गढ़ा है। यह एक बड़ी सच्चाई है. दलित विमर्श को सुप्रसिद्ध लेखिका, अनामिका ने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए लिखा है कि दुनिया में दो मूल दुःख है: एक क्षुधा यानी भूख और दूसरा अपमान नाम का जो दुःख है, वह अस्मिता विमर्श वाले अच्छी तरह समझते हैं। मुझे अक्सर लगता है, कि जो संबंध बाल्मीकि और सीता का था, वही दलित विमर्श और स्त्री विमर्श का होना चाहिए। बाल्मीकि ने सीता को संरक्षण दिया था, अभी धर्म और परिवार की बात हो रही थी। मुझे लगता है कि कई ऐसे शब्द हैं, जिनकी परिभाषा फिर से बननी है यह परिभाषा कहीं और नहीं बल्कि सिर्फ स्त्रियों के यहां बनेगी। परिवार का दायरा बढ़ाना हो या विवाह को पुर्नपरिभाषित करना हो, इसमें स्त्री की भूमिका अनिवार्य है। अनामिका का दृष्टिकोण सही है, कि समाज साहित्य और संस्कारों को स्त्री परिवर्तित कर सकती है। सूरज पाल चौहान ने दलित विमर्श के साहित्य की विषय वस्तु, ज्ञान, अनुभव सबको अलग–अलग माना है। और हिन्दी के पुराने सौन्दर्यशास्त्र से पृथक स्वीकार किया है।[4]

निष्कर्ष, निर्धारित करना और उसके अंतिम दौर तक पहुंचना कठिन हो गया है। कविता, कहानी, उपन्यास, नुक्कड़ नाटक, लघुकथा आदि के द्वारा समकालीन साहित्य को कई–कई पायदानों में किया गया है। भारतीय भाषाओं के

समकालीन साहित्य में भी नारी संवेदना के चित्र विविध विधाओं में देखने को मिलते हैं। विविध आयामों में उनका विश्लेषण किया गया है। मीडिया और आज की स्त्री के बीच संवेदना की खोज की जा चुकी है। लेकिन मीडिया के माध्यम से स्त्री के देह के सौन्दर्य में ही सीमित रखा गया है। कनु प्रिया ने लिखा है कि मीडिया की स्त्री सुन्दर हो, चाहे वो सांवली हो गोरी हो, काली हो या कैसी भी हो अगर स्त्री देह है तो सुन्दर है, मीडिया का यह स्वरूप नारी की संवेदना से दूर–दूर तक नहीं जोड़ा जा सकता। मध्ययुग और आधुनिक युग के प्रारंभ की स्त्री में आन्तरिक सौन्दर्य की खोज अधिक हुई है। देह के सौन्दर्य की कम इसलिये मीडिया विश्वसनीय नहीं है। समसामयिक साहित्य में विस्तार पाये हुये महिला संवेदना के आयामों में पत्रकारिता और जमीन से जुड़ी हुई महिला की संवेदना भी शामिल है। पत्रकारिता में महिला ने उन कोमल और पुरुष दोनों संवेदनाओं को चुना है, जो पत्रकारिता को नये–नये आयामों के बीच में ले जाती है, चाहे वो हरिजन आदिवासियों के अनपढ़ बालकों का संदर्भ हो, चाहे कोठियों में पलने वाले बाल श्रमिकों का करुण जीवन हो, महिला की पत्रकारिता के संस्पर्श से अछूती नहीं है। समकालीन साहित्य में नारी महिला संवेदना की विशाल चादर से कुछ मोती पकड़कर मैंने अपने इस लेख में संलग्न करने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 डॉ गुरूचरण सिंह: कविता का समकालीन, के. एल. पचौरी प्रकाशन, सन् 2004, पृष्ठ–45

2 बच्चन सिंह: हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास– राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, सन् 1999, पृष्ठ–26

3 रामपाल गंगवार: समकालीन प्रश्न और साहित्य चिन्तन, राका प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करणः 1990, आवृति 2001, पृष्ठ 13,

4 समकालीन कविता और सामाजिक चेतना, अक्षर शिल्पी साहित्यिक पत्रिका सितंबर 2010, पृष्ठ 8.